छत्तीसगढ़ के पारंपरिक नृत्य

सरस्वती वर्मा

छत्तीसगढ़ अपनी सांस्कृतिक विरासत में समृद्ध है। यहाँ की संस्कृति में पारंपरिक नृत्य अपनी अलग छटा बिखेरे हुए है, जो इसे और जीवंतता प्रदान करती है। छत्तीसगढ़ के त्यौहारों का अपना बांकपन है। यहाँ कोई त्यौहार अनाहूत की भाँति दबे पांव नहीं आता। सामान्य अतिथि होता है, जिसका भावभीना स्वागत होता है। उसके मनाने की विशिष्ट परिपाटी होती है, जिसमें नृत्य तथा संगीत प्राण फूँकते हैं।

छत्तीसगढ़ का जनजातीय क्षेत्र हमेशा अपने लोक नृत्यों के लिए विश्व प्रसिद्ध रहा है। अनेक लोक नृत्य छत्तीसगढ़ क्षेत्र में प्रचलित हैं। विभिन्न अवसरों, पर्वों से संबंधित भिन्न-भिन्न नृत्य हैं, जिसमें स्त्री-पुरुष समान रूप से भाग लेते हैं। कुछ जनजातियाँ जैसे मुरिया जनजाति, दोरला जनजाति, उरांव एवं मुण्डा जनजाति, कोल जनजाति आदि के विशेष पारंपरिक नृत्य हैं–जैसे गेंडी नृत्य, गौरा नृत्य, पंथी नृत्य, गहिरा नृत्य, करमा, बैगा और गोंड जनजाति का बिलमा नृत्य, हुल्की पाटा, सरहुल नृत्य कुडकू जनजाति का थापटी नृत्य, कोरवा जनजाति का डोमकच नृत्य, परब नृत्य परजा व धुरवा जनजाति का प्रमुख नृत्य है। इस प्रकार अनेक नृत्य हैं, जो छत्तीसगढ़ की जनजातियों के जो बहुत ही प्रचलित एवं पारंपरिक नृत्य हैं।

लोक नृत्य छत्तीसगढ़ के निवासियों की अपनी जातीय परंपरा एवं संस्कृति के परिचायक हैं। कुछ लोक नृत्य लोकगीतों के साथ और भी सजीव हो उठते हैं। जैसे करमा, डंडा और सुआ यह नृत्य छत्तीसगढ़ के लोगों के जीवन में घुल-मिल गये हैं।

छत्तीसगढ़ के कुछ पारंपरिक नृत्य

छत्तीसगढ़ में विविधता पूर्वक लोक नृत्यों की प्रवृत्ति मिलती है। विभिन्न अवसरों, पर्वों में कुछ किये जाने वाले कुछ पारंपरिक नृत्य इस प्रकार हैं–

मुड़िया जनजाति का गेंड़ी नृत्य–गेंडी नृत्य छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र के मुड़िया जनजाति के द्वारा किया जाता है। मुड़िया आदिवासियों में यह पारंपरिक नृत्य बहुत ही खास माना जाता है।

गेंड़ी सामान्यतः बाँस से बनाया जाता है। इसमें बाँस के दो डंडे होते हैं और इन डंडों में निचले सिरे से लगभग एक फिट की ऊँचाई पर, पांव की लंबाई का एक-एक बाँस आड़े दिशा में लगाया जाता है। इसे सामान्य भाषा में 'पऊवा' कहा जाता है। नृत्य करने वाले गेंडी के ऊपरी सिरे को हाथ से पकड़कर पऊवा में पैर टिकाकर संतुलन बनाते हैं और नृत्य करते हैं, चूँकि यह नृत्य गेंड़ी पर आधारित नृत्य है, इसलिए इस नृत्य को गेंड़ी नृत्य कहा जाता है।

गेड़ी नृत्य में केवल पुरुष भाग लेते हैं। ये लगभग 10-15 या उससे कम-ज्यादा के समूहों में नृत्य किया करते हैं। नृत्यकार गेंड़ी पर चढ़कर संतुलन स्थापित कर विभिन्न पारंपरिक वाद्ययंत्रों से निकलने वाली

मधुर ध्वनि पर एक-दूसरे की नृत्य गति के साथ मेल करते हुए विभिन्न कलाओं का प्रदर्शन करते हुए नृत्य करते हैं।

गेंडी नृत्य विभिन्न पारंपरिक वाद्ययंत्रों जैसे मांदर, शहनाई, टिमकी एवं अन्य वाद्ययंत्रों से निकलने वाली मधुर ध्वनि में नृत्य कर पूरे उत्साह के साथ नृत्य करते हैं। गेंडी नृत्य सावन महीने में हरेली पर्व के अवसर पर किया जाता है।

दोरला नृत्य–छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र में निवास करने वाले दोरला जनजाति के लोगों द्वारा किये जाने के कारण इसे दोरला नृत्य कहा जाता है।

दोरला जनजाति के लोग अपने विभिन्न पारंपरिक त्यौहारों, पर्वों एवं विवाह जैसे शुभ कार्यों के अवसर पर पारंपरिक दोरला नृत्य करते हैं। यह नृत्य भी समूह में किया जाने वाला नृत्य है। इसमें स्त्री और पुरुष दोनों भाग लेते हैं। नृत्य के समय पुरुष पंछा, कुसुमा एवं रूमाल धारण करते हैं एवं स्त्रियाँ रहके और बट्टा पहनती हैं। दोरला नृत्य में वाद्ययंत्र विशेष होता है। इसमें विशेष प्रकार के ढोल का प्रयोग होता है। बस्तर में भतरा, परजा एवं धुरवा जनजातियों में भी यह पारंपरिक नृत्य देखने को मिलता है।

सरहुल नृत्य–सरहुल नृत्य छत्तीसगढ़ में उरांव तथा मुण्डा समूह की जनजातियों के द्वारा किया जाता है। उराँव जनजातियों का यह पारंपरिक नृत्य है।

उरांव जनजाति के लोग चैत्र मास की पूर्णिमा पर साल वृक्ष की पूजा का आयोजन करते हैं और उसके आस-पास नृत्य करते हैं। उरांव जनजाति के लिए साल वृक्ष पूजनीय है। इस वृक्ष में सरना देवी का निवास माना जाता है।

सरहुल एक समूह नृत्य है। इसमें युवक-युवती और प्रौढ़ सभी उमंग और उल्लास के साथ हिस्सा लेते हैं। इस नृत्य का प्रमुख वाद्य मांदर और झांझ है। नृत्य में पुरुष नर्तक विशेष प्रकार का पीला साफा बांधते हैं। महिलाएँ अपने जूड़े में बगुले के पंख की कलगी लगाती है। नृत्य में पद संचालन वाद्य के ताल की बजाय गीतों की लय और ताल पर होता है।

सरहुल त्यौहार मार्च-अप्रैल माह के दौरान मनाया जाता है। यह एक प्रकार से फूलों का त्यौहार होता है, जिसमें साल वृक्ष के फूलों से मुण्डा जनजाति को मनाते हैं अथवा इनका आहवान करते हैं। हम सभी जानते हैं कि चैत्र के महीने में सभी पेड़-पौधों में नयी कोंपले, कोमल पत्ते तथा फूल-फल आदि निकल आते हैं। पूरा वातावरण बासंती रहता है। सरहुल त्यौहार भी आदिवासियों का बसंतोत्सव ही है। यह पर्व मूल रूप से वन क्षेत्र में मनाया जाता है। पूजा अर्चना के उपरांत नृत्य-संगीत का कार्यक्रम होता है और सभी इस पारंपरिक नृत्य में थिरक उठते हैं।

परधोनी नृत्य–यह नृत्य बैगा जनजाति के द्वारा किया जाता है। बैगा आदिवासी विवाह के अवसर पर बारात आगमन के समय बारात के स्वागत करने के लिए यह पारंपरिक नृत्य करते हैं। इसके माध्यम से वे अपनी खुशी व्यक्त करते हैं। बैगा जनजाति में इस नृत्य का विशेष महत्व है। इस नृत्य में वर पक्ष की

ओर से एक हाथी बनाकर चला जाता है, यह एक अनुष्ठान के रूप में होता है। यह नृत्य उनके जीवन-चक्र का एक अटूट हिस्सा माना जाता है।

अटारी नृत्य–यह पारंपरिक नृत्य भी बैगा जनजाति के लोगों द्वारा किया जाता है। अटारी नृत्य नृत्यकारों द्वारा वृत्ताकार में किया जाता है। नर्तकों के दोनों कन्धों के ऊपर एक-एक व्यक्ति टिके रहते हैं। एक व्यक्ति ताली बजाते हुए घेरे के भीतर जाकर फिर बाहर निकल जाता है। यह प्रक्रिया वह बार-बार दोहराता है। इस प्रकार यह पारंपरिक नृत्य आदिवासियों के जीवन में उत्साह और उल्लास का रस-घोल देती है।

ककसार नृत्य–ककसार नृत्य अबूझमाड़िया आदिवासी जनजाति में किया जाता है। इस नृत्य का आयोजन वर्ष और फसलों के देव ककसार देव के पूजा के उपरांत किया जाता है।

इस नृत्य में नर्तक की रूप-सज्जा, साज श्रृंगार विशेष आकर्षक होती है। इस नृत्य के दौरान एक ही प्रकार की तुरही वाद्ययंत्र बजाया जाता है, जिसे 'अकुम' कहते हैं। इस नृत्य के दौरान नर्तक और नर्तकियों का झुण्ड कभी-कभी दूसरे गाँवों में विवाह-घर में पहुँच जाते हैं और नृत्य करते हैं। ककसार नृत्य के दौरान अनेक लोगों के जीवन साथी का चुनाव हो जाता है, क्योंकि यह नृत्य मुख्यतः जीवन साथी प्राप्त करने के लिए ही किया जाता है। इस नृत्य में संगीत और घुंघरूओं की मधुर ध्वनि से मन रोमांचक हो उठता है।

ककसार एक धार्मिक नृत्य भी है। इस नृत्य को करते समय नर्तक युवा अपने कमर में पीतल अथवा लोहे की घंटियों से बना कमरबंध, हिरनांग बाँधे रहते हैं। इसके अलावा युवा अपने सिर पर पगड़ी, कलगी और कौड़ियों से श्रृंगार कर आकर्षक वेश-भूषा अभिव्यक्त करते हैं।

थापटी नृत्य–मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र में निवास करने वाले कोरकू जनजाति के द्वारा यह नृत्य किया जाता है। इसे चैत्र-बैसाख के समय किया जाता है। विभिन्न जनजातीय नृत्यों की तरह यह पारंपरिक थापटी नृत्य भी सामूहिक रूप से किया जाने वाला नृत्य है, जिसमें स्त्री एवं पुरुष दोनों हिस्सा लेते हैं। नृत्यकार गोल आकृति में घूम-घूमकर कभी दायें तो कभी बायें झुककर नृत्य करते हैं। इस नृत्य में पैरों एवं हाथों की गति और चाल नृत्य करते समय गाये जाने वाले पारंपरिक लोकगीतों के अनुसार थिरकते हैं।

थापटी नृत्य में ढोलक और बाँसुरी वाद्ययंत्र का मुख्य प्रयोग किया जाता है, जिससे निकलने वाली मधुर ध्वनि नृत्य में आनंद का रस भर देती है।

हुलकी पाटा–हुल्की पाटा नृत्य छत्तीसगढ़ में मुरिया / मरिया जनजाति के द्वारा किया जाने वाला पारंपरिक नृत्य है। इसमें नृत्य के साथ गीत भी गाया जाता है, जिसे हुलकी गीत कहते हैं। यह गीत विशेष आकर्षण रखते हैं। इस नृत्य में युवक और युवतियाँ दोनों हिस्सा लेते हैं, इसमें गाया जाने वाला गीत प्रश्नोत्तरी शैली में होता है, जिसमें राजा-रानी कैसे रहते हैं? अन्य गीतों में लड़के-लड़कियों की शारीरिक संरचना के प्रति सवाल जवाब होते हैं। यह नृत्य किसी समय-सीमा में बंधा हुआ नहीं है, कभी भी नाचा गाया जा सकता है।

बिलमा नृत्य–बिलमा नृत्य मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ प्रदेश में निवास करने वाले गोंड़ एवं बैगा जनजाति के लोगों द्वारा किया जाता है। बिलमा नृत्य विभिन्न जनजातीय पारंपरिक नृत्यों में से एक है। बिलमा का शाब्दिक अर्थ दो समूहों का मिलना होता है।

बिलमा नृत्य को समूह में किया जाता है। यह शरद-ऋतु के प्रारंभ में दशहरे के अवसर पर किया जाता है। इस नृत्य को प्रायः अविवाहित युवक-युवतियाँ करते हैं। बिलमा नृत्य में युवक-युवतियों के अलग-अलग समूह बने होते हैं, जिन्हें चक्र कहा जाता है। यह समूह दूसरे गाँव के समूह के साथ नृत्य करने जाते हैं। नृत्य में कुंवारी हैं। लड़कियाँ विशेष साज-श्रृंगार करके हिस्सा लेती हैं। और नृत्य के दौरान अपनी पसंद के युवक का चुनाव करती हैं। इस नृत्य में ढोल, मांदर एवं बाँसुरी जैसे वाद्ययंत्रों का प्रयोग किया जाता है और लोग झूम उठते हैं।

गौर माड़िया नृत्य–गौर माड़िया नृत्य छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में गौर माड़िया जनजाति द्वारा किया जाता है। इस जनजाति का यह नृत्य बहुत ही हर्षोल्लास से मनाया जाता है। इस नृत्य में सजीवता दिखलायी पड़ती है। यह नृत्य प्रायः विवाह आदि के अवसरों पर किया जाता है। इस नृत्य का नामकरण गौर भैंस के नाम पर हुआ है।

यह नृत्य एक प्रकार से शिकार नृत्य प्रतीत होता है, क्योंकि इसमें जानवरों की उछलने-कूदने आदि की चेष्टाओं को प्रदर्शित किया जाता है। इस नृत्य में सधे हुए ताल के गहन धार्मिक और पवित्र भाव समाहित होते हैं। पुरुष नर्तक रंगीन और विशिष्ट शिरोवस्त्र धारण करते हैं, जिसमें भैंस की दो सींग और उन पर मोर का एक लंबा पंख-गुच्छ और पक्षी के पंख लगे होते हैं। किनारे पर कौड़ी की सीप से बनी झालर झूलती हैं, जिससे उनका चेहरा थोड़ा-सा ढका रहता है। महिलाएँ पंखों की जड़ी हुई एक गोल चपटी टोपी पहनती हैं।

इस नृत्य को करने वाली नर्तकियाँ अपने साधारण सफेद और लाल रंग के वस्त्र को सौन्दर्यमय बनाने के लिए अनेक प्रकार के आभूषणों को धारण करती है। एक आंतरिक गोला बनाकर वे जमीन पर लय के साथ डंडे बजाती हैं, पैर पटकती, झूमती, झुकती और घूमती हुई गोले में चक्कर लगाती रहती हैं। दूसरी ओर पुरुष नर्तक एक बड़ा बाहरी गोला बनाते हैं और तीव्र गति से अपने कदम घुमाते और बदलते हुए जोर-जोर से ढोल पीटते हैं।

ढांढल नृत्य–छत्तीसगढ़ के कोरकू जनजाति के लोगों द्वारा किया जाने वाला पारंपरिक नृत्य है। ढांढल नृत्य है। पुरुषों के द्वारा किया जाता है, जिसमें केवल कोरकू पुरुष ही भाग लेते हैं।

ढांढल नृत्य का आयोजन गर्मी के दिनों में रात्रि के समय किया जाता है। इसमें नृत्यकार लकड़ी की आड़ी डंडों के साथ विभिन्न कला प्रदर्शन करते हुए नृत्य करते हैं। यही इस नृत्य की विशेषता को दर्शाता है। इसमें ढोलक, टिमकी, बाँसुरी वाद्ययंत्रों का प्रयोग किया जाता है।

बार नृत्य–कंवर जनजाति के द्वारा किया जाने वाला यह प्रसिद्ध पारंपरिक नृत्य है। इस नृत्य का आयोजन पाँच वर्ष के अंतराल में होता है।

बार नाचा का आयोजन माघ (जनवरी-फरवरी) के महीने में किया जाता है। गाँवों के किसी खुले मैदानी जगह के मध्य भाग में भीम-देवता की स्थापना की जाती है। लोग स्थापित देवता की पूजा आराधना कर जीवन में सुख-शांति हेतु प्रार्थना करते हैं। पूजा करने के बाद लोग नृत्य करना प्रारंभ करते हैं।

बार नृत्य भी समूह में किया जाता है। इसमें ढोलक, मांदर जैसे वाद्ययंत्रों का प्रयोग किया जाता है। इसकी मधुर ध्वनि में नृत्यकार आपस में श्रृंखला बनाकर नृत्य करते हैं।

कंवर जनजाति बार नृत्य को बड़े ही धूम-धाम से त्यौहार के रूप में 12 दिनों तक करते हैं। अंतिम दिन में सभी लोग भीम देव की पूजा पाठ कर कल्याण कामना करते हैं, उसके बाद एक बकरे की बलि दी जाती है, और सामूहिक भोज का आयोजन किया जाता है।

छत्तीसगढ़ के कोरबा जिले के तुमान सहित कुछ जगहों पर हर पांच साल में इस नृत्य के लिए हजारों लोग जुटते हैं। इस नृत्य की महत्वपूर्ण खासियत है कि इसमें लोग 12 दिनों तक पूरे कुनबे के साथ एक स्थान पर रहते हैं, और इस पारंपरिक त्यौहार नृत्य का आनंद उठाते हैं।

सुआ नृत्य—सुआ नृत्य छत्तीसगढ़ राज्य की स्त्रियों का प्रमुख नृत्य है, इसे समूह में किया जाता है। सुआ नृत्य का आरंभ दीपावली के आने से कुछ दिन ही पूर्व प्रारंभ हो जाता है और दीपावली की रात्रि में शिव-गौरा विवाह के आयोजन से समापन होता है। इसलिए इसे गौरा नृत्य भी कहा जाता है। इसमें महिलाएँ, बालिकाएँ अपने गाँवों से टोली बनाकर समीप के गाँवों में जाती हैं और प्रत्येक घर के सामने गोलाकार झुंड बनाकर ताली की थाप पर नृत्य करते हुए गीत गाती हैं। घेरे के बीच में एक युवती सिर पर लाल कपड़ा ढ़के टोकनी लिए हुए होती है। टोकनी में धान भरकर उसमें मिट्टी के बने हुए दो तोते सजाकर रख दिये जाते हैं। ये दोनों तोते शिव-पार्वती (गौरा) के प्रतीक माने जाते हैं। महिलाएँ झुक-झुककर ताली बजाती हुई गीत गाते हुए यह नृत्य करती है। सुआ नृत्य में जितनी नृत्य की केंद्रीयता है उतना ही सुआ गीत भी महत्वपूर्ण है। सुआ गीत की पारंपरिक लोक धुन अत्यन्त मधुर और प्रभावकारी है।

राउत नृत्य (गहीरा नाच)–राउत नृत्य छत्तीसगढ़ के निवासियों की जातीय परंपरा और संस्कृति का परिचायक है। राउत नाच आदिम आर्य सभ्यता का कृषि और पशुपालन के प्रति श्रद्धा ज्ञापित है, जो महाभारत काल से चली आ रही है। छत्तीसगढ़ी लोक-जीवन में प्रचलित लोक कथा के अनुसार श्री कृष्ण द्वारा अपने दुष्ट मामा कंस के वध के पश्चात् विजय नृत्य के रूप में इस राउत नृत्य का प्रचलन हुआ। राउत नृत्य कार्तिक मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी से पूर्णिमा तक विशेष रूप से किया जाता है

राउत नृत्य में सर्वाधिक प्रसिद्ध वाद्ययंत्र गड़वा बाजा होता है, साथ ही घुंघरू, झांझ, मंजीरा, ढोलक, खंजरी, डफड़ा, झुमका, मांदर, नगाड़ा आदि वाद्य यंत्रों का प्रयोग भी इस नृत्य के अवसर पर किया जाता है।

इस नृत्य की वेश-भूषा नृत्य को और जीवंतता प्रदान करती है। राउत घुटनों तक धोती और पूरी बाँह की कमीज (सलुखा) पहनते हैं। पागा को रंग-बिरंगे फूलों से सजाकर आकर्षक बनाया जाता है।

कमीज के ऊपर कुछ लोग पट्टियाँ पर और पीठ पर बांधे रखते हैं, इसमें ढेर सारे घुंघरू गुथे रहते हैं। दोनों भुजाओं में कौड़ियों से बना 'बहकर पहनते हैं और कंधे पर गाय के पूंछ के बाल से बना 'जजेवा' पहनते हैं। चेहरे पर भी अनोखा साज श्रृंगार होता है। चेहरे पर पीली मिट्टी (वृंदावन के रास नृत्य में प्रयुक्त) लगाते हैं। माथे पर लाल रंग का सिंदूर का टीका, आंखों में काजल इस प्रकार विशेष श्रृंगार वो करते हैं। उनके पैरों में घुँघरू बंधे होते हैं और हाथों में लाठी होती है।

राउत नृत्य के आरंभ में एक व्यक्ति दोहा बोलता है, अन्य सभी उसी दोहे को दोहराते हुए मस्ती में झूमते हुए नृत्य करने लगते हैं। दोनों हाथों से लाठी घुमाते हुए नृत्य शौर्य का प्रदर्शन करते हैं। राउत नृत्य के समय गाये जाने वाले गीत को 'मड़ई गीत' के नाम से भी जाना जाता है। अंततः यह कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ के पारंपरिक नृत्य संपूर्ण भारत में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाये हुए हैं। यहाँ के नृत्य, तीज-त्यौहार, पूजा में लोगों के मन में विशेष उल्लास और उमंग जगा देते हैं। छत्तीसगढ़ की आदिवासी जनजीवन की सांस्कृतिक परंपरा और परंपरागत नृत्य केवल मनोरंजन के साधन नहीं हैं, बल्कि जातीय नृत्य धार्मिक अनुष्ठान और ग्रामीण उल्लास के अंग भी हैं।

संदर्भ

1. छत्तीसगढ़ समग्र-छ. ग. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
2. छत्तीसगढ़ के पारंपरिक नृत्य-www.chattisgarhgyan.in
3. www.bharatdiscovery.org.india
4. www.digicgvision.in
5. www.abhivyakiti.in

सरस्वती वर्मा, सहायक प्राध्यापक (हिन्दी),

शासकीय माता कर्मा कन्या महाविद्यालय,

महासमुन्द (छ.ग.)